'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों की वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूट (डीम्ड यूनिवर्सिटी)
दयालबाग, आगरा
की
पी–एच. डी. (शिक्षाशास्त्र)
आंशिक पूर्ति हेतु
प्रस्तावित रूपरेखा (2015)

शोधार्थिनी

नेहा गोस्वामी

शोध–निर्देशिका :
डॉ० आरती सिंह
(पैडागाजिकल साइन्सेस विभाग)

विभागाध्यक्ष व संकाय प्रमुख
प्रो० विभा निगम
(पैडागाजिकल साइन्सेस विभाग)

शिक्षा संकाय
दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूट (डीम्ड यूनिवर्सिटी),
दयालबाग आगरा–282005

प्रस्तावना

"काल की कसौटी पर खरे उतरे विश्वभर के धर्मशास्त्र मूल तत्त्व की दृष्टि से एक हैं, सभी एक अनादि और अनन्त शक्ति में विश्वास करते हैं और मनुष्य को ऊपर उठाने की प्रेरणा देते हैं।"[1]

—स्वामी योगानन्द

परमपिता परमेश्वर द्वारा निर्मित इस सृष्टि में मानव सर्वाधिक बुद्धिसम्पन्न एवं चिन्तन—मनन की क्षमता से युक्त प्राणी है। अपने आस—पास के बिखरे प्राकृतिक सौन्दर्य एवं चमत्कार, प्रकृति के नित नवीन सृजन एवं क्रियाकलाप, यथा—नदियों की कल—कल ध्वनि, पक्षियों का कलरव, दिवस व रात्रि का होना, पुष्पों का विकसित होना, ऋतुओं का आवागमन आदि को देखकर मानव के मन में यह जिज्ञासा उठी कि इस जगत् को नियमित रूप से सुव्यवस्थित एवं अनुशासित होकर चलाने वाली कौन सी शक्ति है? प्राणियों में ऊर्जा का स्रोत क्या है? वह कौन है जो सदैव नियमित रूप से अपने सृजन को परिणाम दे रहा है ? यह सृष्टि कहाँ से उत्पन्न हुई है? इसके निर्माण का उद्देश्य क्या है ? ऐसे अगणित प्रश्नों के उत्तर जानने की जिज्ञासा ही 'दर्शन' की जननी है। दर्शनशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के अन्तिम सत्य एवं मानव के वास्तविक स्वरूप सृष्टि—सृष्टा, आत्मा—परमात्मा, जीव—जगत, ज्ञान—अज्ञान, ज्ञान प्राप्त करने के साधन और मनुष्य के करणीय तथा अकरणीय कर्मों की तार्किक विवेचना की जाती है क्योंकि दार्शनिकता वह प्रत्यय है जो कुछ निश्चित सिद्धान्त निर्मित करने की प्रेरणा देता है। दार्शनिक सिद्धान्तों के आधार पर ही मानव जीवन के लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है और समाज के क्रमिक विकास की व्यवस्था का संचालन करने के योग्य नियमों को मान्यता प्रदान की जाती है। यही प्रमुख कारण है कि समाज की नई पीढ़ी को सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों एवं व्यवहार के प्रारूप प्रदान करने के लिए दार्शनिक ज्ञान आवश्यक है।

दर्शन से प्राप्त सैद्धान्तिक ज्ञान व्यावहारिक सफलता की नींव है। आवश्यक, उपयोगी व उत्कृष्ट रचनात्मक विचार सिद्धान्त के रूप में शताब्दियों तक सुप्त पड़े रहते हैं, जब कभी मानवीय

---

1. लाल एवं तोमर, ''विश्व के श्रेष्ठ शैक्षिक चिन्तक'' आर.लाल. बुक डिपो, पृष्ठ संख्या—449।

प्रयत्नों से उनको विश्लेषित किया जाता है तो सृजनात्मक मस्तिष्क से प्रेरणा प्राप्त कर वे सहसा ही उदीप्त हो उठते हैं और वर्तमान समस्याओं के समाधान में सहायता प्रदान करते हैं। भारतवर्ष दार्शनिक तत्त्व–चिन्तन के लिए सदैव विश्व–विश्रुत रहा है। भारतीय विचारधारा में दर्शन और जीवन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है। अतः सम्पूर्ण जीवन को दर्शन का क्षेत्र माना गया है। भारतीय अवधारणा के अनुसार दर्शन का क्षेत्र केवल ज्ञान तक ही सीमित न रहकर समग्र व्यक्तित्व को अपने में समाहित कर लेता है। भारतीय दर्शन का सर्वोपरि रूप जिसने इसकी समग्र संस्कृति को ओत–प्रोत कर रखा है और जिसने इसके समस्त चिन्तनों को एक विशेष प्रकार का आकार प्रदान किया है, इसकी आध्यात्मिक प्रवृत्ति है। भारतीय अध्यात्म की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि मानव जीवन में भौतिक और अध्यात्म, इन दोनों का ही समन्वय इस प्रकार किया गया है कि मानव भौतिक जगत् में रहकर भी उच्च जीवन मूल्यों हेतु अग्रसर हो सकता है। अध्यात्म की वेदी पर जीवन की बलि भी नहीं दी गई और भौतिक जीवन के लिए अध्यात्म का तिरस्कार भी नहीं किया गया है। जीवन को सन्तुलन प्रदान करने के लिए ही हमारी संस्कृति में 'धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष' चार पुरुषार्थ निर्धारित किये गये हैं। 'भारतीय जीवन दर्शन' इन्ही पुरुषार्थों की क्रमिक विकास की कहानी है। संस्कृति, धर्म व आध्यात्मिकता की त्रिवेणी में अवगाहन करके भारतीय मनीषियों ने इस ब्रह्माण्ड तथा इसके पीछे कार्य करने वाली शक्ति को जानने की अपनी जिज्ञासा के लिए जिन तत्त्व रत्नों का अन्वेषण किया है, वे ही उपनिषद् व ग्रन्थों के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित हैं। (चित्र संख्या–1)

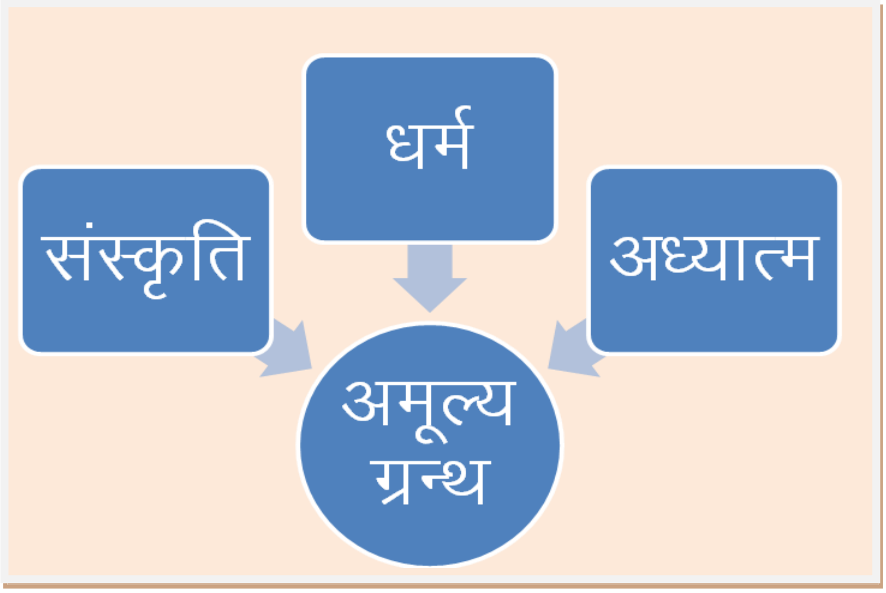

चित्र संख्या–1 अमूल्य ग्रन्थ का अन्वेषण

हमारे प्राचीन ग्रन्थ उच्च जीवन के लिए इन्हीं महान् मूल्यों व आदर्शों के ज्ञान का निरूपण करने वाले हैं। 'अष्टावक्र गीता' भारतीय आध्यात्मिक ग्रन्थों में ऐसा ही अमूल्य ग्रन्थ है जिसे भगवद् गीता, उपनिषद् और ब्रह्मसूत्र के समान आदर दिया जाता है। (चित्रसंख्या–2)

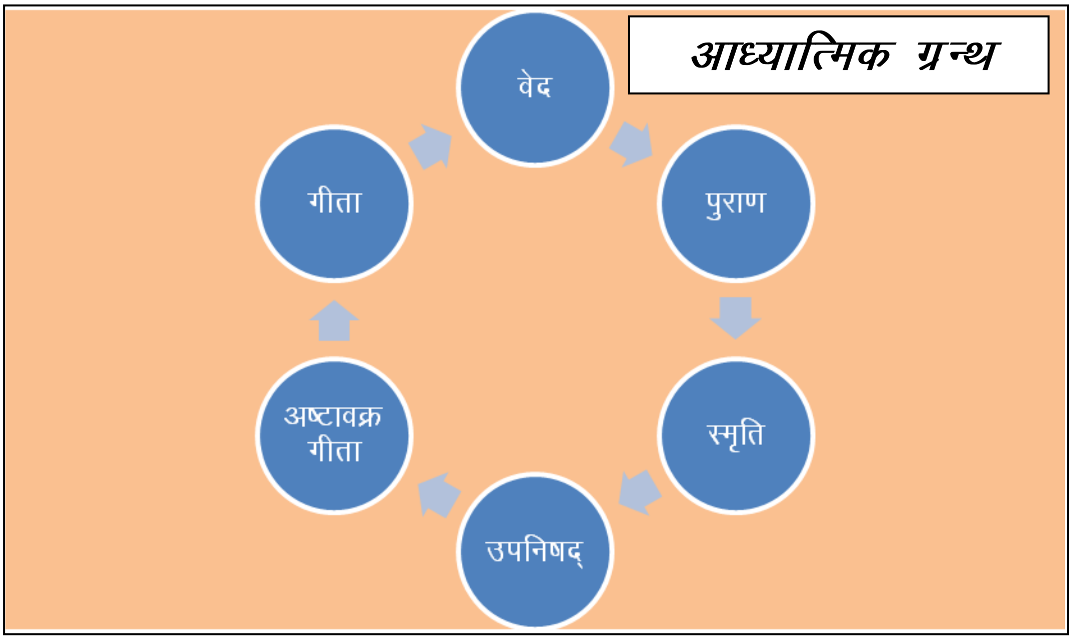

चित्र संख्या–2 आध्यात्मिक ग्रन्थ

श्रीमद्भगवद्गीता की भाँति इसमें भी गुरू–शिष्य के मध्य संवाद हुआ है। अष्टावक्र गीता में तत्त्व ज्ञान व मोक्ष से सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान सरल विधि से किया गया है। अष्टावक्र गीता का प्रारम्भ ही मुमुक्ष राजा जनक के ज्ञान प्राप्ति तथा मुक्ति एवं वैराग्य की जिज्ञासा के साथ हुआ है:–

"कथं ज्ञानमवाप्नोति चेन्तात विषयान् विषवत्यज।
वैराग्यं च कथं प्राप्तमेतद्ब्रूहि मम प्रभो।। 1/1।।"

राजा जनक ने ज्ञान प्राप्ति एवं मुक्ति हेतु गुरु अष्टावक्र के सामने जिज्ञासा की है, हे प्रभो ! ज्ञान कैसे प्राप्त होता है ? मुक्ति कैसे प्राप्त होती है ? वैराग्य कैसे प्राप्त होता है।[2]

---

2. 'अष्टावक्र गीता' प्रथम प्रकरण, सूत्र संख्या–1।

जीवन के ऐसे अनेक गूढ़ प्रश्नों का उत्तर गुरू अष्टावक्र ने राजा जनक को विशद विश्लेषण के साथ दिया है। गुरू अष्टावक्र से तत्त्व ज्ञान को प्राप्त कर राजा जनक को आत्मसाक्षात्कार हुआ और उन्हें परम विश्रांति व परम सुख की प्राप्ति हुई, जिसके फलस्वरूप राजा जनक विदेह हो गये।

"मुक्तिमिच्छसि चेन्तात विषयान् विषवत्यज।
क्षमार्ज्जवदयातोषं सत्यं पियूषवद् भज ।।1/2।।"

गुरू अष्टावक्र के अनुसार हे तात्! यदि तुम्हें वास्तव में मुक्ति की इच्छा है तो विषयों को विष के समान त्याग दो और क्षमा, सरलता, संतोष का अमृत के समान पान करो।[3]

मुक्ति अनिवार्यतः विदेह अथवा मरणोत्तर स्थिति नहीं है। सदेह पुरूष भी जीवन मुक्त हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि मानव अपनी मानवीय दुर्बलताओं से मुक्त होने का प्रयास करे। चित्त की दुर्बलतायें मानव को लघु बनाती हैं। लोभ, काम, मोह, माया व क्रोध के वशीभूत हो भौतिकवादी होते जा रहे आज के मानव के जीवन में सन्तुलन का अभाव हो गया है। जन–जन में अविश्वास, ईर्ष्या, शत्रुता तथा प्रतिद्वंद्विता के कारण विश्व में भ्रष्टाचार, हिंसा, आतंकवाद तथा अमानवीयता के कृत्य बढ़ते जा रहे हैं। चारों और जीवन में संघर्ष व असंतुलन ही दृष्टिगोचर होता है। चित्त की दुर्बलता मानव पर वीभत्स प्रभाव डाल रही हैं, जिससे उसके हृदय में नकारात्मक और ध्वंसात्मक विचार पल्लवित हो रहे हैं, वह सदैव ही अपने भौतिक हित संधान के प्रयत्न में संलग्न रहता है। परहित की मानवीय और उदार प्रवृत्ति से वह सर्वथा अपरिचित और अनभिज्ञ हो गया है। आज का शिक्षित मानव, मानव न होकर मात्र प्राणी बनकर रह गया है क्योंकि मानव के जो शाश्वत मानवीय गुण हैं, यथा–प्रेम, परोपकार, सहानुभूति, त्याग आदि प्रायः लुप्त हो रहे हैं और इनका स्थान द्वेष, घृणा, स्वार्थ, प्रतिस्पर्धा ग्रहण कर रहे हैं। इन मानवीय गुणों का खालीपन एक समस्या बनकर रह जाएगा। इस समस्या के समाधान के लिए गुरू अष्टावक्र कहते हैं कि मानव अपने सांसारिक कर्त्तव्यों का पालन करते हुए चित्त को शुद्ध व दोषरहित बना सकता है, इसके लिए इतना ही पर्याप्त होगा कि वह मानवीय दुर्बलताओं को चित्त पर हावी न होने दे। दुःख का मूल द्वैत

3. 'अष्टावक्र गीता' प्रथम प्रकरण, सूत्र संख्या–2।

है। जब व्यक्ति स्वयं को परमात्मा से अलग समझता है तो वह दुःख से ग्रस्त हो जाता है। स्वयं को अहंकार से मुक्त करने के लिए ही गुरू अष्टावक्र राजा जनक को उपदेश देते हैंः–

"अहं कर्त्तेव्यहंमानं महाष्णाहि दंशितः।
नांह कर्त्तेति विश्वासामृतं पीत्वा सुखी भव।।1/8।।"

अष्टावक्र कहते हैं– 'मैं कर्ता हूँ' इस अहंकार रुपी विशाल काले सर्प से दंशित हुआ तू 'मैं कर्ता नहीं हूँ' इस विश्वास रुपी अमृत को पीकर, सुखी हो।[4]

गुरू अष्टावक्र परामर्श देते हैं कि नैतिकता का वरण करना ही अभीष्ट है। जब मानव विवेक व अविवेक का अन्तर करने में समर्थ होता है तो आदर्शों और मूल्यों के प्रति उसमें निष्ठा जाग्रत होती है, जो उसे कभी भी कुप्रवृत्तियों का दास बनने की अनुमति नहीं देगी। विवेक जाग्रत हो जाने पर मानव जीवन से सम्बन्धित कर्म तो करता है, परन्तु किसी प्रकार के लोभवश कर्म में लिप्त नहीं होता। उसके विचार व आत्मा आत्म–विवेक प्राप्त कर विस्तारित हो जाते हैं। उसमें सामाजिकता व एकता की विस्मयकारी भावना जाग्रत होती है, जिससे वह किसी को स्वयं से पृथक मानने की कल्पना नहीं करता और इस प्रकार जन–जन में एकता–बंधुत्व और अपनत्व जैसे सद्गुण विकसित किये जा सकते हैं। गुरू अष्टावक्र ने ज्ञानोपदेश के द्वारा राजा जनक को जो बोध विधि प्रदान की है वह निश्चित रूप से समय, देश और काल की सीमा के परे पूर्ण वैज्ञानिक है। गुरू अष्टावक्र अद्वैतवादी हैं, वे सार्वभौमिक चेतना की बात करते हैं। आत्मज्ञानी की दशा का वर्णन करते हुए वह कहते हैंः–

"नाहं देहो न मे देहो बोधोऽहमिति निश्चयी।
कैवल्यमिव संप्राप्तो न स्मरत्यकृतं कृतम्।।11/6।।"[5]

अज्ञानी शरीरों को देखता है, पदार्थों को देखता है, इसलिए उसे विविधतायें दिखाई देती हैं, लेकिन ज्ञानी समस्त संसार के मूल तत्त्व ब्रह्म को देखता है, जिससे संसार का अस्तित्व है। इस कारण उसे इस संसार में एकरूपता दिखाई देती है। गुरू अष्टावक्र राजा जनक को तत्त्व ज्ञान का उपदेश देते हुए कहते हैं कि शास्त्र अनेक प्रकार के हैं जिनके अनेक मत हैं। ये शास्त्र केवल पथ प्रदर्शक हो सकते हैं इससे अधिक कुछ नहीं। शास्त्रों में ज्ञान नहीं है, ज्ञान तो स्वयं के भीतर

4. 'अष्टावक्र गीता' प्रथम प्रकरण, सूत्र संख्या–8।

5. 'अष्टावक्र गीता' एकादश प्रकरण, सूत्र संख्या–6।

उपलब्ध है जिसका प्रकटीकरण आत्मसाक्षात्कार से संभव है अर्थात् व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियों को बाहर की ओर अग्रसित करना ही वास्तविक ज्ञान है तथा यही शिक्षा का मूलभूत अर्थ है।

वर्तमान में ऐसी शिक्षा की ही आवश्यकता अनुभव की जा रही है, जिससे ऐसे नागरिक तैयार किये जा सकें जो बिना किसी दबाब व कुंठा के अपने व्यक्तित्व का विकास करें तथा राष्ट्र व विश्व के निर्माण में अपना योगदान दे सकें। शिक्षा ऐसी हो जो मानव को अज्ञान के अंधकार से ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जा सके तथा मानव–मात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सके।

2. <u>समस्या का प्रादुर्भाव</u>

भारतीय संस्कृति में 'वसुन्धैव कुटुम्बकम्' की भावना के साथ सभी के लिए सुखी व स्वस्थ रहने की कामना की गई है। इस कामना को करते हुए ही भारतीय ऋषि–मुनियों, मनीषियों ने जीवन के रहस्यों को खोज निकाला, जिससे वे परमार्थ के मानसरोवर में निमग्न होकर आनन्दानुभूति करने लगे। जीवन के झंझावातों से बचकर सत्य एवं असत्य, जड़ एवं चेतन तथा दुःख व सुखादि तत्त्वों को समझने के लिए सृष्टि के प्रारम्भ से ही भारतीय मनीषी अपनी समस्त शक्तियों को प्रयुक्त करते आये हैं। जीवन में सरलता व सहजता, हृदय में सभी को सुखी व निरोगी करने की उद्दात भावना, सत्य–प्रियता, जगत के मिथ्या होने का ज्ञान, भक्ति व आत्मसमर्पण, चिर–सुख तथा परमानन्द की प्राप्ति के लिए उत्सुकता सामान्यतः प्रत्येक भारतीय के क्रियाकलापों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होती है।

आधुनिक युग विज्ञान के आश्चर्यजनक विकास व तकनीकी से परिपूर्ण उपलब्धियों का युग है। विज्ञान व तकनीकी ने मिलकर प्राचीन ज्ञान–विज्ञान तथा उसके सिद्धान्तों के समीकरण परिवर्तित कर दिये हैं। आज के युग में अध्यात्म पर विचार करना बहुतों को हास्यप्रद लगता है। आध्यात्मिक विकास के उद्देश्य को काल्पनिक उद्देश्य की संज्ञा दी जाती है। मानवीय मूल्यों पर औद्योगीकरण के प्रहार ने मानव के सर्वतोमुखी विकास की आधारशिला को हिला दिया है। आधुनिकीकरण की आँधी में वह जीवन के वास्तविक लक्ष्य से दिग्भ्रमित हो गया है। वर्तमान समय

में मानव वाह्य उन्नति के लिए प्रयासरत है। अपनी स्वार्थमूलक भावना के कारण वह परम संचित उपलब्ध ज्ञान, शक्ति एवं संतोष के स्थान पर संघर्ष, प्रतियोगिता एवं विनाश का कारण बन रहा है। आधुनिकता के नाम पर स्वयं को भुलाकर तामसिक एवं पाशविक प्रवृत्तियों से पूर्ण असभ्यता एवं आत्मवनति के गर्त में स्वयं को गिराता चला आ रहा है। अतः वर्तमान में ऐसे दार्शनिक चिन्तन की आवश्यकता परिलक्षित होती है जिसके माध्यम से मानव पाशविक प्रवृत्तियों के घर्षण से बचकर आत्मानुभूति करके निःस्वार्थ कार्य करने की प्रवृत्ति को अपनाकर जीवन के परमार्थिक लक्ष्य को प्राप्त कर सके।

आज का शिक्षित मानव, मानव न रहकर मात्र प्राणी बनकर रह गया है, मानवीय गुणों की रिक्तता एक प्रश्न बनकर सम्पूर्ण मानव जाति को उद्वेलित कर रही है। अतः आवश्यक है कि शिक्षा दर्शन भी कल्याणकारी उदात्त भावना से अभिभूत होकर संकीर्ण विचारों की परिधि को तोड़कर अपने में विस्तृत स्वरूप को समाहित कर ब्रह्माण्ड के समान हो जाए। कोई भी दार्शनिक मानव–जीवन की व्याख्या कर उसके अंतिम उद्देश्य को निश्चित करके ही शान्त नहीं होता अपितु यथा–सामर्थ्य उद्देश्य की प्राप्ति के उपायों पर भी विचार करता है। अनादि काल से मानव ज्ञान, मुक्ति, वैराग्य के शाश्वत मार्गों का अनवरत अनुसंधान कर रहा है। आज भी उसके ज्ञान की तृष्णा समाप्त नहीं हुई है, आज भी वह मुक्ति की इच्छा से व्याकुल है और समस्त समस्याओं, विषमताओं एवं कामनाओं से संबंध–विच्छेद करना चाहता है, किन्तु उसे सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है। निःसंदेह यदि उसे सफलता प्राप्त हो जाती तो इन गूढ़ प्रयासों की चर्चा को ही विराम लग जाता। संसार में रहकर सदेह जीवन–मुक्ति का उदाहरण हमारे समक्ष राजा जनक हैं जिन्हें गुरू अष्टावक्र ने मुक्ति का मार्ग दिखाया, गुरु अष्टावक्र जीवन–मुक्त की संसार में स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं–

"व्यामोहमात्रविरतौ स्वरूपादानमात्रतः।
वीतशोका विराजन्ते निरावणदृष्टयः।।18/6।।"

अष्टावक्र कहते हैं जिनकी दृष्टि से सभी आवरण नष्ट हो चुके हैं, ऐसे तत्त्वज्ञानी महापुरूष सभी प्रकार के मोहों से मुक्त ,अपने स्वरूपमात्र में स्थित हुए, शोकों से परे शोभायमान होते हैं।[6]

---

6. 'अष्टावक्र गीता' अष्टादश प्रकरण, सूत्र संख्या–6।

'अष्टावक्र गीता' में निहित उपदेश मानव के अंदर क्षमा, उदारता, दया, संतोष तथा सत्य जैसी महान और उदात्त भावनाओं को जाग्रत कर, सभी प्रकार के मोहों से मुक्त करके चारित्रिक सुदृढ़ता प्रदान करते हैं, जिससे मानव सुखी, शान्त व संतोषी जीवन व्यतीत कर सकता है। ऐसा व्यक्ति जीवन–मुक्त कहलाता है। वर्तमान समय में गुरू अष्टावक्र के इन विचारों से हमें भी लाभ प्राप्त हो सकता है, इस विचार के वशीभूत होकर ही शोधार्थिनी द्वारा 'अष्टावक्र गीता' को शोध अध्ययन का विषय बनाने की जिज्ञासा हुई।

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन

(1) अष्टावक्र गीता

सम्बन्धित साहित्य के अवलोकन से 'अष्टावक्र गीता' पर स्वामी श्रद्धानन्द (1936) द्वारा हस्तलिखित 'अष्टावक्र संहिता' के नाम से पाठ्य सूत्र प्राप्त हुए हैं। इनका प्रकाशन ललिता माल्या द्वारा अँग्रेजी और संस्कृत में तथा विद्युत बोस द्वारा बंगाली भाषा में किया गया है। स्वामी नित्यानन्दस्वरुप (1940) के द्वारा लिखित 'अष्टावक्र गीता' का 'अष्टावक्र संहिता' के नाम से प्राप्त हुआ है, जो कि संस्कृत में है। रमन महर्षि (1945) द्वारा संस्कृत में हस्तलिखित 'अष्टावक्र गीता' एवं उसकी व्याख्या लिखी हुई प्राप्त हुई है। उनके द्वारा इस पर प्रवचन भी दिया गया है। नाथ, बैज (लाल) (1907) ने 'अष्टावक्र गीता ' पर अपना भाष्य अँग्रेजी भाषा में लिखा है। सिंह जालिम (1971) द्वारा 'अष्टावक्र गीता' पर टीका लिखी गई है, जिसमें 'अष्टावक्र गीता' के सूत्रों का तार्किक व विशद् विश्लेषण हिन्दी भाषा में किया गया है। मुखर्जी (1971) ने 'अष्टावक्र गीता' पर अपना भाष्य अँग्रेजी भाषा में लिखा है। बायरम थॉमस (1990) द्वारा 'अष्टावक्र गीता' का अँग्रेजी भाषा में अनुवाद 'द हर्ट ऑफ अवेयरनेस' के नाम से किया गया है। तमिल भाषा में श्री स्वामी विश्वनाथ के द्वारा 'अष्टावक्र गीता' का अनुवाद किया गया है। ये सूत्र 'अष्टावक्र संहिता' के नाम से लिखे गये हैं। स्वामी शतानन्द (2001) द्वारा 'द क्वांटम लीप इन्टू द एबस्यूलेट (एसेन्स ऑफ' अष्टावक्र गीता')' के नाम से हिन्दी भावार्थ व व्याख्या दी गई है। प्रसाद पी. पदालकर (2001) द्वारा 'अष्टावक्र गीता' का मराठी भाषा में अनुवाद किया गया है।

अँग्रेजी विद्वान जॉन रिचर्ड्स (2002)के द्वारा 'अष्टावक्र गीता' का अँग्रेजी भाषा में अनुवाद 'द सॉंग ऑफ अष्टावक्र' के नाम से किया गया है। बार्ट मार्शल (2005) ने 'अष्टावक्र गीता' का लय तथा छन्द के साथ अँग्रेजी भावार्थ किया है। स्वामी शतानन्द पुरी (2001) द्वारा 'द क्वांटम लीप इन्टू द एबस्यूलेट (एसेन्स ऑफ 'अष्टावक्र गीता')' के नाम से अँग्रेजी भावार्थ व व्याख्या दी गई है। डॉ० मृदुला कीर्ति (2006) ने जॉन रिचर्ड्स के अष्टावक्र गीता के अँग्रेजी अनुवाद से प्रेरित होकर हिन्दी मे' अष्टावक्र गीता का काव्यानुवाद किया है। मैन्युल स्कॉच (2007) द्वारा 'बिटन बाइ ब्लैक स्नेक,(द एनसियंट विस्डम ऑफ् अष्टावक्र)' के नाम से पुस्तक लिखी गई है। इसके अतिरिक्त लाम्बा एम. (2012), दशोरा एन. (2014), सरस्वती रामानन्द (2014) द्वारा 'अष्टावक्र गीता' पर हिन्दी भावार्थ, अनुवाद एवं व्याख्या प्राप्त हुई है। सत्यशारदा कनडुला (2012) ने अँग्रेजी भाषा में 'अष्टावक्र गीता' कें सूत्रों पर अपने ब्लॉग में 25 दिन तक लेख प्रस्तुत किये हैं।

(2) दार्शनिक तत्त्व

हुसैन एम. (1973) 'स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन एक तत्त्व मीमासंक उपागम' शोध अध्ययन किया गया है, निष्कर्ष में प्राप्त हुआ है कि स्वामी जी का शैक्षिक दर्शन अद्वैतवाद पर आधारित है। आधुनिक भारतीय शिक्षा के अभावों को शिक्षा के अद्वैतवाद प्रत्यय से सुलझाया जा सकता है। अद्वैतवादी शिक्षा मानवीयता को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रोत्साहित करती है। माहेश्वरी बी.के. (1884) द्वारा किए गए शोध 'भारतीय शिक्षा दर्शन के मूल तत्त्वों का समालोचनात्मक अध्ययन' का मुख्य उद्देश्य भारतीय शिक्षा दर्शन के मूल तत्त्वों का आलोचनात्मक अध्ययन करना था। निष्कर्ष में बौद्ध, जैन, सांख्य, न्याय, वेदान्त दर्शन की तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा, मूल्य मीमांसा का विवेचन करके स्पष्ट किया है कि वेदान्त शिक्षा में उल्लेखित शिक्षक–शिक्षार्थी सम्बन्ध प्रत्येक समाज और प्रत्येक काल के लिए आदर्श हैं। केसरी एच. (1986), के शोध 'आधुनिक शिक्षा के संदर्भ में गीता अध्ययन प्रक्रिया के रुप में' द्वारा गीता में निहित दार्शनिक विचारों में वैयक्तिक–स्व, निरपेक्ष–स्व, भौतिक जगत के लाभ हेतु शिक्षा व शैक्षिक प्रक्रिया से सम्बन्धित प्रत्ययों पर शोध अध्ययन किया गया है। निष्कर्ष में प्राप्त हुआ है

कि गीता की तत्त्व मीमांसा (ब्रह्म विद्या), तथा इसकी शिक्षण प्रक्रिया (योग विद्या) व्यक्तित्व के पूर्ण विकास हेतु सत्य का ज्ञान कराने में सक्षम है। ईगलसन आई. (1999) के 'कान्ट की अन्र्तदृष्टि की ज्ञान–मीमांसीय भूमिका' शोध अध्ययन में कान्ट के ज्ञान मीमांसा के विचारों का अध्ययन किया गया। शोध के परिणामनुसार कान्ट का अन्र्तदृष्टि सि़द्धान्त प्रत्यक्षीकरण की प्रामाणिक भूमिका के लिए आवश्यक है। प्रत्यक्षीकरण की ज्ञान–पद्धति में महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

(3) <u>शैक्षिक परिपेक्ष्य</u>

चारलू एम. के. (1971) के शोध 'भगवद्गीता का शैक्षिक दर्शन' में गीता के दार्शनिक पक्ष के शैक्षिक निहितार्थ का अध्ययन किया है एवं निष्कर्ष में प्राप्त हुआ कि गीता के पाठ्क्रयम के अन्तर्गत समस्त जीवन निहित है व श्रीकृष्ण आदर्श शिक्षक तथा अर्जुन आदर्श शिष्य हैं। वेंकटेश्वरलू एम. (1978) द्वारा किए गए शोध 'महाभारत में निहित शैक्षिक दर्शन' से निष्कर्ष दिया है कि महाभारत में निहित शैक्षिक विचार जीवनोत्कर्ष करते हैं और भावी पीढ़ी को भविष्य संवर्धन हेतु उचित परामर्श देते हैं। दुबे एम. (1980) के शोध कार्य 'उपनिषदों में शिक्षा दर्शन' द्वारा निष्कर्ष निकाला गया कि उपनिषदों का शैक्षिक दर्शन मानव प्रत्यय पर आधारित है, आश्रम प्रणाली व्यक्ति के जीवन की विविध अवस्थाओं, रुचि, क्षमताओं पर आधारित है। रायजदा एस. (1988) के 'अक्षपाद गौतम का शिक्षा दर्शन और उसकी समकालीन सार्थकता' शोध अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि आधुनिक शिक्षा के द्वारा शिक्षार्थी को सांसारिक व आध्यात्मिक विषयों से पूर्णता की ओर अग्रसर किया जा सकता है। इसके लिए न्याय दर्शन का दृढ़तापूर्वक पालन करने से जीवन की गुणवत्ता में शोधन करके शैक्षिक संरचना में उचित परिवर्तन लाया जा सकता है।

उपर्युक्त सभी शोध अध्ययनों में प्रायः भारतीय दर्शन, संस्कृत ग्रन्थ व साहित्य एवं आधुनिक विचारकों को सम्मिलित किया गया है तथा उनकी शैक्षिक प्रासंगिकता का अध्ययन किया गया है। जिनमें गीता, महाभारत, उपनिषदों के दार्शनिक तत्त्वों तथा आदिगुरू शंकराचार्य, महात्मा

गाँधी, श्री अरविन्द डॉ. जे. कृष्ण मूर्ति, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, रविन्द्र नाथ टैगोर, स्वामी विवेकानन्द आदि के विचारों का शैक्षिक अध्ययन किया गया है एवं अष्टावक्र गीता का हिन्दी, तमिल, मराठी, बंगाली एवं अँग्रेजी भाषा में अनुवाद व व्याख्या प्राप्त हुई है किन्तु अपेक्षित प्रयास के बाद भी शोधार्थिनी के संज्ञान में प्रस्तुत शोध के ग्रन्थ 'अष्टावक्र गीता' पर किसी प्रकार के शैक्षिक अध्ययन का उल्लेख नहीं प्राप्त हो सका है। ये सभी अध्ययन शिक्षा के संदर्भ में होने के कारण अध्ययन किए गए हैं क्योंकि शोधार्थिनी का शोध प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ व शिक्षा के क्षेत्र से सम्बन्धित है। शोधार्थिनी द्वारा अनेक शोधों का अध्ययन किया गया है जिनमें आदिगुरू शंकराचार्य, महात्मा गाँधी, श्री अरविन्द, डॉ. जे. कृष्ण मूर्ति, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् आदि का दर्शन एकात्मवादी दर्शन है, इनके विचारों में हमें अद्वैतवाद की पराकाष्ठा मिलती है तथा इनके विचारों पर शिक्षा में अनेकानेक अनुसंधान होते आये हैं। इन सभी महापुरूषों के विचारों को आज शिक्षा में प्रयोग में लाया जा रहा है। अद्वैतवादी विचारधारा समन्वयवादी है, यह वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व को एक सूत्र में बाँधने में सहायक हो सकती है। यही कारण है कि शोधार्थिनी को भी 'अष्टावक्र गीता' ग्रन्थ के प्रति जिज्ञासा हुई कि इसमें निहित दार्शनिक तत्त्व वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को भारतीय दृष्टि से रूपान्तरित करने में कहाँ तक सहायता कर सकते हैं क्योंकि यह ग्रन्थ भारतीय दर्शन की अद्वैतवादी विचारधारा के प्राचीन व प्रमुख संस्कृत ग्रन्थों में से एक है। अतएव इसमें निहित शैक्षिक दर्शन को जानना वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य की आवश्यकता तो है ही साथ–साथ मानव के सर्वांगीण व समन्वित विकास के लिए अपरिहार्य भी हो जाता है।

3. <u>अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व</u>

इक्कीसवीं सदी ने मानव अस्तित्व के सामने अगणित चुनौतियाँ रखी हैं, जिनके कारण वह त्रस्त स्थिति में हैं। ये चुनौतियाँ दो प्रकार की है–आतंरिक व वाह्य चुनौतियाँ। आंतरिक चुनौतियों के अन्तर्गत मुख्य रूप से वैचारिक द्वन्द्व व भावात्मक विक्षोभ आते हैं जिनके फलस्वरूप व्यक्तित्व प्रभावित होता है और व्यक्ति में अनेक प्रकार के मनोरोग उत्पन्न होते हैं। जिससे व्यक्ति चिन्ता, अवसाद व भग्नाशा से घिर जाता है। दूसरी और वाह्य चुनौतियों के अन्तर्गत पारिवारिक विघटन व

सामाजिक असामंजस्य आते हैं, जो व्यक्ति, परिवार, समाज व विश्व के सम्मुख छोटी–बड़ी अनेकानेक समस्याओं का कारण बनते है। आज के इस परिवेश में आवश्यकता है कि युवाओं व छात्रों को हम ऐसी शिक्षा दें जों उन्हें कष्ट, समस्या व विपत्ति में भी धैर्यवान व निर्विकार बना सके। वे समस्याओं के समाधान ढूंढने में अपना मानसिक स्वास्थ्य बनाये रखें। उनके अन्दर परिवार व समाज के प्रति संवेदनशीलता हो, क्योंकि विभिन्न समस्यायें संवेदनहीन होने का ही परिणाम है। आज की शिक्षा व्यवस्था में विज्ञान व तकनीकी के उद्देश्य को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम तैयार किया जा रहा है, एवं धर्म, अध्यात्म व दर्शन को गौण स्थान दिया गया है, जिससे व भौतिक उन्नति तो चरम सीमा पर पहुँच रही है, किन्तु उसी के साथ मानसिक, भावात्मक व आत्मिक तत्त्वों का ह्रास जान पड़ता है। विज्ञान व अध्यात्म में से किसी एक पक्ष को महत्वपूर्ण बनाना एकांगी है जो अपूर्णता की स्थिति है। सत्य तो यह है कि जीवन में विज्ञान व अध्यात्म दोनों की समान रूप से आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा का एक आधार दर्शन भी है, जिससे हमें अपनी आत्मा तथा चेतन तत्त्व को जानने में सहायता मिलती है और हमारा बाह्य ही नहीं आन्तरिक पक्ष भी सुदृढ़ होता है। आज के समय में पश्चिम के अनेक महान वैज्ञानिकों ने दर्शन को अपने वैज्ञानिक प्रयोगों का आधार बनाया है। हाइजेनबर्ग (1930), श्रोडिंगर (1927) जैसे कितने नाम हैं, जिन्होंने अपने वैज्ञानिक प्रयोगों में दर्शन के सिद्धान्तों को सत्यापित किया है। महात्मा बुद्ध का क्षणिकवाद, आचार्य शंकर का अद्वैतवाद अब न केवल दर्शन व अध्यात्म जीवन की साधनाओं का निष्कर्ष है, बल्कि अनेक महान वैज्ञानिकों के प्रयोगों का भी निष्कर्ष है। निरन्तर व अनवरत अनुसंधान की प्रक्रिया सदैव दर्शन व विज्ञान के निष्कर्षो की आभा बनाये रखती है। आज के समय में इस सत्य को समझने की कहीं अधिक आवश्कता है। आज दार्शनिकों से लेकर शिक्षाविद् एवं राजनीतिज्ञ तक सभी यह प्रयत्न कर रहे हैं कि बिखरती जा रही मनुष्य जाति को कैसे समेटकर एक सूत्र में बाँधा जाए। इसके लिए पाठ्यक्रम में युवाओं व छात्रों के लिए व्यावसायिक पक्ष के साथ–साथ दार्शनिक पक्ष को सुदृढ़ करने के लिए प्रयत्न किया जा रहा है। विभिन्न शिक्षाविद् एवं मनोवैज्ञानिक इस विचार से सहमत हैं कि छात्रों को मानसिक शांति बनाये रखने के लिए योग शिक्षा व परामर्श केन्द्र की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए। विज्ञान व अध्यात्म दोनों का समन्वय ही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। भारतवर्ष

अध्यात्म के लिए विश्व विश्रुत रहा है यहां के षड्–दर्शन ने अध्यात्म के शिखर को स्पर्श किया है। उसमें भी वेदान्त दर्शन की अद्वैतवादी विचारधारा को सभी दर्शनों में श्रेष्ठ माना जाता है। अद्वैत दर्शन का ही आदि ग्रन्थ 'अष्टावक्र गीता' है, इसमें जो चर्चा का विषय है वह परम शक्ति परम ब्रह्म अद्वैत ब्रह्म है, 'अष्टावक्र गीता' पर अनेक विद्वानों द्वारा लिखित अनुवाद, पुस्तक व भाषा–टीका रचनायें तो उपलब्ध होती हैं, लेकिन व्यवस्थित रूप में उसका शैक्षिक संदर्भ अप्राप्य–सा है। ऐसे में यह आवश्यकता अनुभव हुई कि आज के नैतिक, आध्यात्मिक एवं चारित्रिक मानदण्डों में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन आये हैं, जिनसे हमारे जीवन में जो विभिन्न समस्यायें–भ्रष्टाचार, आतंकवाद, हिंसागत द्वन्द्व साम्प्रदायिकता आदि दृष्टिगोचर हो रही हैं उनका समाधान हमें 'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों के विवेचना से प्राप्त हो सकता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए शोधार्थिनी के विचार में प्रस्तुत समस्या जीवन के आन्तरिक पक्ष पर प्रकाश डालने के साथ–साथ समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप व्यक्ति के स्वतंत्र व एकीकृत विकास के लिए सहायक होगी और दार्शनिक सन्दर्भों की शैक्षिक सार्थकता सिद्ध हो सकेगी।

3. **<u>समस्या कथन</u>**

प्रस्तुत शोध–अध्ययन का शीर्षक निम्नांकित है–

'अष्टावक्र गीता में निहित दार्शनिक तत्त्वों की वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता'।

4. **<u>समस्या में निहित पदों की क्रियात्मक परिभाषा</u>**

(अ) <u>अष्टावक्र गीता</u>

'अष्टावक्र गीता' को 'अष्टावक्र संहिता' भी कहा जाता है। गुरू अष्टावक्र द्वारा राजा जनक की जिज्ञासाओं का समाधान ''जनक–अष्टावक्र संवाद'' रूप में 'अष्टावक्र गीता' है। प्रथम प्रकरण 'गुरूक्तात्मानुभव प्रकरण' है, इसमें राजा जनक की ज्ञान, वैराग्य एवं मुक्ति के प्रति जिज्ञासा करना है तथा गुरू अष्टवक्र द्वारा ज्ञानोपदेश दिए जाने का वर्णन है। इस प्रकरण में 20 सूत्र में संवाद हुआ है। द्वितीय प्रकरण 'शिष्योक्तात्मानुभव प्रकरण' कहा जाता है। इसमें

राजा जनक द्वारा आत्मा–ज्ञान की उपलब्धि का वर्णन है। 'तृतीय प्रकरण' 'आक्षेपद्वारकोपदेश प्रकरण' है, जिसमें गुरू अष्टावक्र द्वारा राजा जनक के आत्म–ज्ञान की परीक्षा ली गई है। चतुर्थ अध्याय में राजा जनक का उत्तर समाविष्ट है। पंचम अध्याय में गुरू अष्टावक्र द्वारा राजा जनक को मोक्ष प्राप्ति का उपाय बताया गया है। षष्ठ एवं सप्तम् अध्याय में राजा जनक द्वारा क्रमशः मुक्ति की अभिव्यक्ति एवं स्थिति का वर्णन है। अष्टम् से लेकर एकादश अध्याय में गुरू अष्टावक्र द्वारा राजा जनक को आसक्ति व तृष्णा त्याग का उपदेश दिया है तथा आत्म–ज्ञानी की दशा का वर्णन है। द्वादश से चर्तुदश अध्याय में राजा जनक द्वारा आत्म–ज्ञान की अनुभूति, स्थिति तथा मुक्त पुरूष की स्थिति का वर्णन है। पंचदश अध्याय से अष्टादश अध्याय तक गुरू अष्टावक्र का तत्त्व बोध वर्णन, संसार व मुक्ति के भेद का वर्णन, जीवनमुक्त की स्थिति एवं उसकी संसार में स्थिति का वर्णन है। अंतिम दो अध्याय मे राजा जनक के द्वारा आत्मविश्रांति एवं जीवमुक्ति का वर्णन किया गया है। इस प्रकार सम्पूर्ण 'अष्टावक्र गीता' में 20 प्रकरण में 298 सूत्र निहित है। प्रस्तुत शोध में अष्टावक्र गीता के इन्हीं 20 प्रकरणों का अध्ययन शिक्षा दर्शन के परिप्रेक्ष्य में किया जाएगा।

(ब) दार्शनिक तत्त्व

'दर्शन' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'दृश्' धातु से मानी गई है, जिसका अर्थ है 'देखना'। 'दृश्यते यथार्थ तत्त्वमनेन' अर्थात् जिससे सत्य तत्त्व को देखा जाए वह दर्शन है। दर्शन सर्वप्रथम एक क्रिया है उसके बाद गौण रूप से यह एक विषय वस्तु है, जिसका अपना एक साहित्य है। यह एक मानसिक क्रिया है। किसी समस्या का चिन्तन करना, मनन करना और उसके सही स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना ही दर्शन है। दर्शन को तत्त्व मीमांसा से संबंधित समस्याएँ, ज्ञान मीमांसा से संबंधित समस्याएँ एवं मूल्य मीमांसा से संबंधित समस्याओं के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। (चित्र संख्या–3)

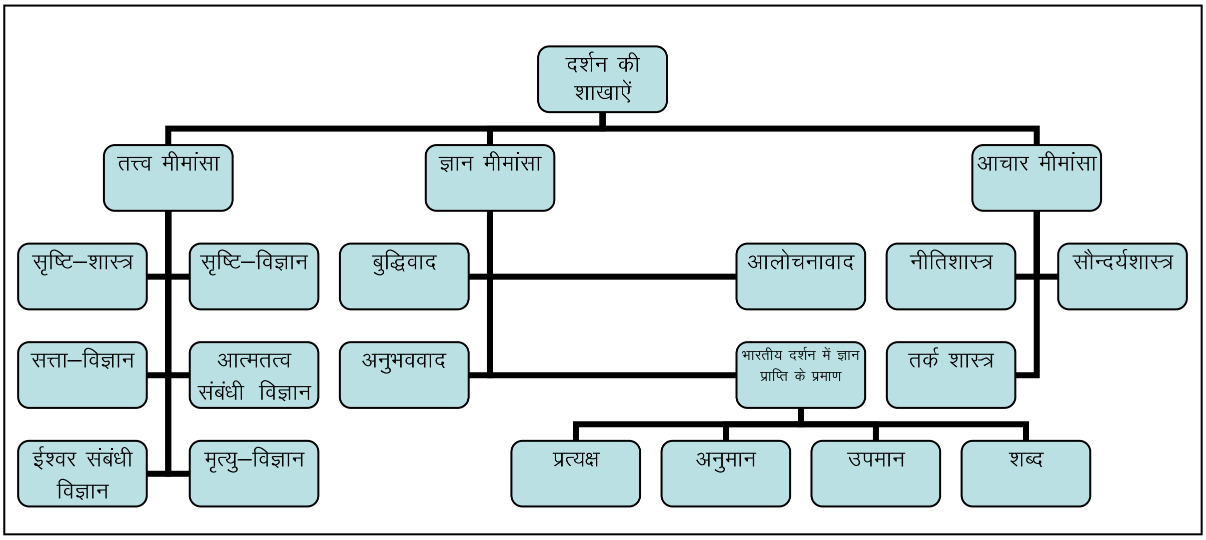

चित्र संख्या–3 दर्शन की शाखाऐं

अतः दर्शनिक चिन्तन में तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और आचार मीमांसा शाखाऐं ही मुख्य तत्त्व हैं। किसी भी विचारक के दर्शन को समझने के लिए अध्ययन सामग्री को इन तीन तत्त्वों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। इन तीनों तत्त्वों का वर्णन संक्षेप में प्रस्तुत है–

(अ) <u>तत्त्व मीमांसा</u>

दर्शन में तत्त्व मीमांसा का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसमें सृष्टिशास्त्र, सृष्टि–विज्ञान, सत्ता–विज्ञान, आत्म–तत्त्वज्ञान, ईश्वर तत्त्व–ज्ञान को सम्मिलित किया जाता है। इसमें सृष्टि–सृष्टा, आत्मा–परमात्मा, जीव–जगत् एवं जन्म–मरण के प्रश्नों की व्याख्या के साथ–साथ सत्ता की वास्तविक विवेचना की जाती है।

(ब) <u>ज्ञान मीमांसा</u>

ज्ञान मीमांसा के क्षेत्र में मानव बुद्धि, ज्ञान का स्वरूप, ज्ञान की सीमा, ज्ञान की प्रमाणिकता ज्ञान प्राप्त करने के साधन, ज्ञान प्राप्त करने की विधियाँ, तर्क की विधियाँ, सत्य–असत्य प्रमाण और भ्रम की व्याख्या की जाती है।

(स) आचार मीमांसा

मूल्य आचार मीमांसा के क्षेत्र में मानव जीवन के आदर्श एवं मूल्यों की विवेचना, उचित/अनुचित, सही/गलत; करणीय एवं अकरणीय व्यवहार की विवेचना आती है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में दार्शनिक तत्त्वों से तात्पर्य तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और मूल्य मीमांसा से है। अध्ययन में अष्टावक्र गीता में निहित उन सभी सूत्रों का समावेश किया जाएगा जो इन तीनों तत्त्वों से सम्बन्धित हैं।

(द) वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य

मानव व्यवहार में सकारात्मक वांछनीय परिवर्तन के लिए शिक्षा को साधन के रुप में प्रयोग में लाया जाता है, इसके लिए शिक्षा में वे विचार प्रयोग में लाये जाते हैं, जो मानव के मन, बुद्धि, चेतना, एवं शरीर इन चारों के विकास, उन्नति, संस्कार, व आरोग्य में सहायता देते हैं। इस प्रकार शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक, नैतिक, आर्थिक, धार्मिक, आध्याात्मिक मूल्य निहित होते है, जिनके द्वारा शिक्षा का स्वरूप, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया, शिक्षक, शिक्षार्थी, प्रशासन एवं अनुशासन निर्धारित होता है। प्रस्तुत अध्ययन में वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य से तात्पर्य वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था से है जो विभिन्न आयोगों व नीतियों द्वारा बालक के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखकर निर्धारित की गई है। इसके अन्तर्गत शिक्षा का स्वरूप, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया, शिक्षक, शिक्षार्थी, प्रशासन एवं अनुशासन का अध्ययन किया जाएगा।

(न) प्रासंगिकता

प्रासंगिकता का अर्थ है वह विचार या प्रसंग जो किसी समय विशेष में उपादेय हो। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रासंगिकता से तात्पर्य है, वे प्रसंग अथवा विचार जो 'अष्टावक्र गीता' में निहित हैं एवं वर्तमान समय में उपादेय हैं।

5. उद्देश्य

प्रस्तावित शोध अध्ययन के उद्देश्य निम्नांकित है–

(1) 'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों का गहन अध्ययन करना ।

(2) 'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों का संकलन एवं शैक्षिक विश्लेषण करना ।

(3) वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य की विवेचना करना।

(4) 'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों की वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का अध्ययन करना।

(5) 'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों की वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

6. अध्ययन की विधि एवं प्रक्रिया

प्रस्तावित अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित विधि एवं प्रक्रिया का किया का प्रयोग किया जाएगा –

अध्ययन की विधि एवं प्रक्रिया

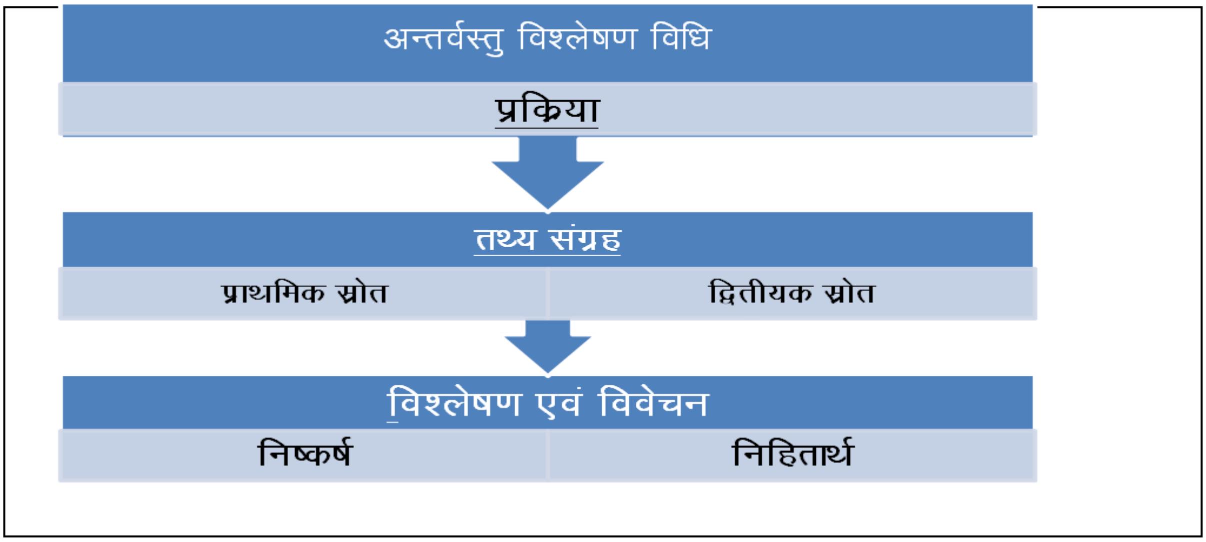

चित्र संख्या–4 विधि एवं प्रक्रिया

(अ) विधि–

प्रस्तुत शोध अध्ययन की प्रकृति दार्शनिक है। दार्शनिक शोध के लिए अन्तर्वस्तु विश्लेषण विधि को उत्कृष्ट विधि का महत्त्व दिया जाता है। इस का प्रयोग शोध कार्य को विधिवत प्रस्तुत करने हेतु किया जाता है। यह विधि विषयवस्तु विश्लेषण विधि, पाठ्य वस्तु विश्लेषण विधि, आलेख विश्लेषण विधि एवं पुस्तकालय विधि के नाम से भी अभिधेय है। यह वह विधि है जिसके द्वारा प्रलेख या अध्ययन सामग्री के अन्तर्निहित तथ्यों को ज्ञात किया जाता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन की दार्शनिक प्रकृति के कारण अन्तर्वस्तु विश्लेषण विधि ही उपयुक्त विधि है। अतः शोध अध्ययन के लिए अन्तर्वस्तु विश्लेषण विधि को आधार बनाया जाएगा ।

(ब) प्रक्रिया –

प्रस्तावित अध्ययन को निम्न चरणों में पूरा किया जाएगा –

(i) तथ्य संग्रह –

तथ्य संग्रह प्राथमिक एवं द्वितीय दोनों स्रोतों से किया जाएगा। अष्टावक्र गीता की मूल पुस्तक को प्राथमिक स्रोत के रुप में अपनाया जाएगा। द्वितीय स्रोत के रुप में उन विद्वानों की टीकाओं का अध्ययन किया जायेगा जिन्होंने अष्टावक्र गीता की व्याख्या की है।

(ii) विश्लेषण एवं विवेचन –

अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर शोध सामग्री का विश्लेषण एवं विवेचन किया जाएगा।

(iii) निष्कर्ष एवं निहितार्थ –

अष्टावक्र गीता में निहित दार्शनिक तत्त्वों पर आधारित शिक्षा–दर्शन के सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक पक्षों को समग्र रुप में प्रस्तुत किया जाएगा और उसके आधार पर निष्कर्षों एवं निहितार्थों पर पहुँचा जाएगा।

7. अध्ययन योजना – प्रस्तुत अध्ययन निम्न अध्यायों में विभाजित किया जाएगा–

1. प्रथम अध्याय	प्रस्तावना
2. द्वितीय अध्याय	'अष्टावक्र गीता' का परिचय एवं विषय–वस्तु की विवेचना।
3. तृतीय अध्याय	'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों की विवेचना।
4. चतुर्थ अध्याय	वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य की विवेचना।
5. पंचम अध्याय	वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य के आधार पर 'अष्टावक्र गीता' में निहित शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता की विवेचना करना।
6. षष्ठ अध्याय	निष्कर्ष एवं सुझाव।

8. शोध परिसीमन –

समय की सीमा के कारण प्रस्तावित शोध को निम्न बिन्दुओं के संदर्भ में परिसीमित किया गया है–

1– प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु 'अष्टावक्र गीता' तथा उससे सम्बन्धित साहित्य का चयन किया गया है।

2– प्रस्तुत शोध अध्ययन 'अष्टावक्र गीता' में निहित दार्शनिक तत्त्वों की वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगकिता की विवेचना एवं मूल्यांकन तक सीमित रहेगा।

3– दार्शनिक तत्त्व एवं वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य की विवेचना के लिए अन्य सम्बन्धित साहित्य का अवलम्बन लिया जाएगा।

9. अध्ययन की न्यायोचितता

वर्तमान का अस्तित्व सदैव अतीत की गहराईयों से सम्बन्धित होता है। किसी भी देश का अतीत ही उसकी वर्तमान एवं भावी प्रेरणा का मूल स्रोत है। प्राचीन भारतीय विचारकों की दृष्टि जीवन के प्रति व्यापक रही है। उन्होंने जीवन को सुख व शान्तिपूर्वक जीने के लिए अनेकानेक खोजें की हैं, जो उनकी जीवन के प्रति आस्था व भौतिकवादी दृष्टिकोण की परिचायक हैं साथ ही परमसत्य तथा आनन्द की प्राप्ति के लिए विचारशील होकर विकसित किये गये दर्शन व साहित्य उनकी अध्यात्मवादी आस्था व दृष्टिकोण को वर्णित करते हैं। जीवन के प्रति भौतिकवादी एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण का समन्वय भारतीय दर्शन व साहित्य में ही परिलक्षित होता है। शताब्दियों से भारतीय जनमानस सत्यम्–शिवम् सुन्दरम् के मूल्यों का अनुसरण करते आये हैं। भारतीय दर्शन व साहित्य की छत्र–छाया में पल्लवित विवेकपूर्ण मूल्य ही हमें करणीय का निर्देश देते आये हैं। परन्तु आज पाश्चात्य जगत की चमक–दमक व भौतिकता के प्रति आकर्षित होकर भारतीय अपने जीवन दर्शन व मूल्यों का विस्मरण कर स्वयं के मूलस्वरूप से दिशाविहीन होकर भ्रमित हो रहे हैं। प्राचीन भारतीय जीवन दर्शन व साहित्य को शैक्षिक अनुसंधान का विषय बनाने के प्रति उपेक्षा रही है, जबकि शिक्षा का एक आधार दर्शन भी है। दूसरे शब्दों में कहें तो दार्शनिक समस्याओं को नीरस व पुस्तकीय समझकर उपेक्षित सा कर दिया गया है। जिसके फलस्वरूप भारत की नवीन पीढ़ी स्वयं ही अपने देश की विपुल ज्ञान राशि से अपरिचित रह जाती है। भारत जैसे देश में जहाँ संस्कृति का प्राण आध्यत्मिक विश्वास रहा है, जो कि मानवीय विकास का सर्वोपरि शिखर माना जाता है, वहाँ भौतिकता की जड़ें अध्यात्म से अधिक किस प्रकार सुदृढ़ हो सकती है।

अतः दार्शनिक विचारधाराओं में ही आधुनिक शिक्षा के संदर्भ खोजने की आवश्यकता है। आधुनिक शिक्षाविद् यह अनुभव कर रहे हैं कि जिस तीव्र गति से हमारी सभ्यता का भौतिक पक्ष समृद्धशाली होता जा रहा है उस अनुपात में आन्तरिक पक्ष नहीं। आधुनिक भारत में ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसमें भारतीय जीवन–तत्त्वों की अधिकता हो ताकि भारत के प्राचीन गौरव व मूल्यों को भी पुनः प्रतिष्ठित किया जा सके। शिक्षा की नींव भारतीय दर्शन के आधार पर खड़ी की जानी चाहिए जिससे बालक में क्षमा, दया, संतोष समता कर्त्तव्य–निष्ठता, सत्य, अहिंसा, प्रेम के पूर्ण मानवीय गुण विकसित हो सकें जिनके आधार पर ही 'वसुन्धैव कुटुम्बकम्' की उदात्त भावना को जाग्रत की किया जा सके शिक्षा का यही उद्देश्य होना चाहिए। प्राचीन काल से ही समय–समय पर ऐसे अनेक महापुरूष अवतरित हुए है जिनके मार्गदर्शन से संसार को इहलोक तथा परलोक में सुखी व श्रेष्ठ जीवन जीने के सूत्र प्राप्त होते रहे हैं। भारतवर्ष की पावन भूमि पर गुरू अष्टावक्र ऐसे ही महापुरूष हुए हैं जिनका नाम आध्यात्मिक जगत् में बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। उनके विचार वर्तमान परिस्थितियों में बालक के चरित्र को सुदृढ़ता व उत्कृष्टता प्रदान करते हैं। उन्होंने वाह्य आडम्बरों की तुलना में आन्तरिक शुद्धता पर बल दिया है। 'अष्टावक्र गीता' के प्रथम अध्याय में ही गुरु अष्टावक्र आत्मा के स्वरुप की व्याख्या करते हुए जाति और सम्प्रदाय के महत्त्व को नकारते हुए घोषणा करते हैं–

> "न त्वं विप्रादिको वर्णो नाश्रमी नाक्षगोचरः।
> असंगोऽसि निराकारो विश्वसाक्षाी सुखी भव।।1/5।।"[7]

अष्टावक्र कहते हैं कि न तुम ब्राह्मणादि वर्णों वाले हो, न ब्रह्मचर्यादि आश्रमों वाले, इन्द्रियों के विषय भी तुम नहीं हो । तुम असंग हो, तुम्हारा कोई निश्चित आकार नहीं हैं और इस संसार के साक्षी हो, इसलिए तुम सुखी होओ। जाति और सम्प्रदायविहीन उनकी विचारधारा समकालीन आवश्यकताओं की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसमें निहित चिन्तन विश्वकल्याणकारी है। गुरू अष्टावक्र अद्वैतवाद के प्रबल समर्थक हैं। उनका ज्ञानोपदेश 'अष्टावक्र गीता' में निहित है। अष्टावक्र गीता के महत्त्व का इस बात से भी जाना जा सकता है कि जब स्वामी विवेकानन्द रामकृष्ण परमहंस के पास गये व परमात्मा का प्रमाण पूछा तो रामकृष्ण परमहंस जी ने सर्वप्रथम उन्हें

7. 'अष्टावक्र गीता' प्रथम प्रकरण, सूत्र संख्या–5।

अष्टावक्र गीता पढ़ने को दी क्योंकि वे इसे ज्ञान प्राप्ति के उच्च ग्रन्थ का महत्त्व देते थे, कहते हैं विवेकानन्द इस पुस्तक को पढ़ते–पढ़ते ही ध्यानस्थ हो गये थे, उनका सम्पूर्ण दर्शन अद्वैतवाद का समर्थन करता है। गुरू अष्टावक्र के विचारों के समसामयिक महत्त्व को समझते हुए भारत के आधुनिक चिन्तकों डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, महर्षि रामन, स्वामी विवेकानन्द, श्री जे. कृष्णामूर्ति, स्वामी योगानन्द, 'आर्ट ऑफ लिविंग' के गुरू श्री श्री रविशंकर, स्वामी चिन्मयानन्द एवं आचार्य ओशो के द्वारा भी समय–समय पर 'अष्टावक्र गीता' में निहित मूल्यों को प्रमाणिकता को सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार आज भी गुरू अष्टावक्र के विचार समाज में समसामयिक मूल्य स्थापित करने में उपयोगी हैं। सत्य तो यह है कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में विकसित होने वाले बालकों की शिक्षा व्यवस्था को भारतीय दार्शनिक आधार पर व्यवस्थित होना उतना ही अनिवार्य है जितना कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बदलती हुई वैज्ञानिक प्रवृत्तियों से परिचित होना। इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर शोधार्थिनी द्वारा 'अष्टावक्र गीता' के दार्शनिक तत्त्वों की विवेचना करके उन मूलभूत तत्त्वों को उद्घाटित करने का प्रयास किया जायेगा जिससे भारतीय शिक्षा, सांस्कृतिक परम्परा से सम्बद्ध बनी रहे तथा उसका नियोजन इस प्रकार किया जाए कि भावी छात्र स्वयं को अपनी संस्कृति से अपरिचित न समझे। हमारी संस्कृति की जो विंशेषता है वह अक्षुण्य बनी रहे, यह विशेषता है सभी को समान भाव से देखना, प्रत्येक धर्म, सम्प्रदाय, जाति का आदर करना, दूसरे शब्दों में सहिष्णुता अपनाना, शान्ति व संतोष के साथ जीवन व्यतीत करना जिसमें किसी प्रकार का मानसिक क्लेश या बौद्धिक संघर्ष न हो। शिक्षा द्वारा छात्र का ऐसा विकास किया जाए कि वह स्वयं को द्वन्द्वों से निकालकर बिना किसी मानसिक दवाब के प्रेमपूर्ण जीवन व्यतीत करे। शिक्षा के इन उद्देश्यों की प्राप्ति में गुरू अष्टावक्र के वचन सहायक सिद्ध हो सकते हैं। यही कारण है कि प्रस्तुत अध्ययन का प्रयोजन समकालीन युग में आवश्यक ही नही उपादेय भी है। इस कार्य द्वारा शिक्षा का भारतीयकरण सम्भव हो सकता है क्योंकि हमारी संस्कृति का अधिकांश भाग संस्कृत ग्रन्थों में निहित है। शिक्षा के भारतीयकरण के लिए शैक्षिक अनुसंधानकर्ताओं को संस्कृत ग्रन्थों पर शैक्षिक शोध करके शिक्षा के लिए नये आयाम प्रस्तुत करने चाहिए। विदेशों में संस्कृत ग्रन्थों पर अनेक शोध किये जा रहे हैं, अपने देश में भी संस्कृत ग्रन्थों पर शोध को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। अथाह संस्कृत साहित्य के अध्ययन कार्य द्वारा शिक्षा को भारतीय संस्कृति के अनुकूल अनेक समयोपयोगी तथ्य प्राप्त हो सकते हैं। अतः शोधार्थिनी ने 'अष्टावक्र गीता' का

शैक्षिक दृष्टि से अध्ययन करने का निश्चय किया है। शोधार्थिनी को अपने ज्ञान एवं क्षमताओं की सीमा का बोध है एवं वह इस विचार से पूर्णतः सहमत है कि 'अष्टावक्र गीता' में गुरू अष्टावक्र के अनेक महत्वपूर्ण शिक्षा सम्बन्धी विचार विद्यमान हैं जो वर्तमान शिक्षा के लिए पथ प्रदर्शक का कार्य कर सकते हैं।

10. **<u>शोध अध्ययन की शिक्षा में उपादेयता</u>**

प्रस्तुत शोध अध्ययन शिक्षा के क्षेत्र में निम्न बिन्दुओं में सहायता प्रदान कर सकेगा–

(1) दर्शन का कार्य शिक्षा के उद्देश्य प्रदान करना है। प्रस्तुत शोध द्वारा शिक्षा के लिए भारतीय परिप्रेक्ष्य में उद्देश्य विकसित करने में सहायता प्राप्त होगी क्योंकि अष्टावक्र गीता भारत के प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में से एक है। इसके शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने से शिक्षा को भारतीय संस्कृति के अनुकूल अनेक समयोपयोगी तथ्यों की प्राप्ति होगी।

(2) 'अष्टावक्र गीता' में निहित दर्शन अद्वैतवादी विचारधारा का समर्थन करता है, जिससे शिक्षा में एकीकृत एवं समन्वयात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता मिलेगी।

(3) गुरु अष्टावक्र की विचारधारा जाति और सम्प्रदाय विहीन है, इसके द्वारा विविधता से पूर्ण विश्व में विश्व बन्धुत्व की भावना' का विकास हो सकेगा और यही शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है एवं समकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक है।

(4) वर्तमान समय में सभ्यता का भौतिकवादी पक्ष तो समृद्ध हो रहा है किन्तु आध्यात्मिक पक्ष का विकास इसकी तुलना में न्यून ही परिलक्षित होता है, अतः आवश्यकता है कि शिक्षा में आध्यात्मिक पक्ष को भी समृद्ध किया जाए, प्रस्तुत शोध अध्ययन से शिक्षा के द्वारा आध्यात्मिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायता प्राप्त होगी, जो कि भारतीय संस्कृति का प्राण है।

(5) सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य जाति इस अन्वेषण में है कि उसे शाश्वत व सत्य आनन्द की प्राप्ति हो, दूसरे शब्दों में कहें तो आत्मानुभूति के उद्देश्य की प्राप्ति हो सके, विभिन्न दर्शन व चिन्तन इसी प्रयास का परिणाम हैं, किन्तु आज भी हमें सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है। 'अष्टावक्र गीता' में राजा जनक ने आत्मानुभूति की प्राप्ति की घोषणा की है, जिसके द्वारा

उन्हें सशरीर मुक्ति प्राप्त हुई और वे विदेह कहलाये। अतः प्रस्तुत शोध द्वारा शिक्षा को व्यक्ति के विकास के सर्वोपरि शिखर आत्मानुभूति के उद्देश्य की पूर्ति में सहायता प्राप्त हो सकती है।

(6) अष्टावक्र गीता में निहित चिन्तन विश्व कल्याणकारी है। इसके द्वारा निर्मित शिक्षा के उद्देश्य विश्व कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने में सहायक होंगे।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

- Baij Nath (Lala.) (1907). *The Ashtavakra Gita: being a dialogue between King Janaka and Rishi Ashtavakra on Vedanta*. Office of the Vaishya Hitkari. Retrived 3 january 2015 from: http://www.advaita-philosophy.info/upanishads/Brihadaranyaka_Upanishad_Chapter_Four.html
- बिहारी रमनलाल, 'शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार' रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ, पृष्ठ संख्या–108।
- Byrom, Thomas (1990). *The Heart of Awareness: A Translation of the Ashtavakra Gita*.Shambhala Publications. Page xxiii.
- Eaglson, I. ; (1999) 'The Epistomic Role of Kantian Intuition'; Dissertation Abstract International, 60(11) pp240
- चारलू एम. के. (1971); 'भगवद्गीता का शैक्षिक दर्शन' एम. बी. बुच का सेकण्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, सोसाइटी फॉर एजुकेशनल रिसर्च एण्ड डवलपमेन्ट; बड़ौदा।
- दुबे एम. (1980) "उपनिषदों में शिक्षा दर्शन" एम.बी.बुच का सेकण्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, एन सी ई आर टी, दिल्ली, पृष्ठ 39–40।
- दशोरा नन्दलाल, (2014), 'अष्टावक्र गीता' रणधीर प्रकाशन, आगरा।
- हुसैन एम. (1973) 'स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन एक तत्त्व मीमासंक उपागम' एम. बी. बुच का सेकण्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, सोसाइटी फॉर एजुकेशनल रिसर्च एण्ड डवलपमेन्ट; बड़ौदा।
- केसरी एच. (1986), के शोध 'आधुनिक शिक्षा के संदर्भ में गीता अध्ययन प्रक्रिया के रुप में' एम. बी. बुच का फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, सोसाइटी फॉर एजुकेशनल रिसर्च एण्ड डवलपमेन्ट; बड़ौदा।
- Kirti Mradul(2009); "Ashtavakra Gita Hindi Kavyaanuvaad" Retrived 8 December 2014 from:http:// www.Mridulkirti.com/ashtravakra_gita/
- लाल एवं तोमर 'विश्व के श्रेष्ठ शैक्षिक चिन्तक'. आर. लाल. बुक डिपो. 449
- लाम्बा मनोज, (2014), 'अष्टावक्र गीता', अमित पॉकेट बुक्स, जालन्धर।
- Manuel Schoch (1 July 2007). *Bitten by the Black Snake: The Ancient Wisdom of Ashtavakra*. Sentient Publications. ISBN 978-1-59181-060-5. Retrieved 20 July 2012.
- Marshall,Bart,(2005)TranslationAshtavakraGita' Retrived from :(http://www.dhtmlnirvana.com/downloads/Ashtavakra.pdf).
- Mukerjee, Radhakamal (1971). *The song of the self supreme (Ashtavakragītā): the classical text of Ātmādvaita by Ashtāvakra*. Motilal Banarsidass Publ. ISBN 81-208-1367-7, ISBN 978-81-208-1367-0. Source: [1] (accessed: Friday March 19, 2010)
- Osho, Bhagwan Shree Rajneesh (1997). *Enlightenment: The Only Revolution*. Pune, India: The Rebel Publishing House Pvt. Ltd. ISBN 81-7261-070-X.
- पण्डया पी. (सं०). दिसम्बर 2013. अखण्ड ज्योति .मथुरा. जनजागरण प्रेस. अंक–12, पृष्ठ संख्या–5–7।

- पण्डया पी. (सं०). जनवरी, 2014. अखण्ड ज्योति. मथुरा. जनजागरण प्रेस. अंक–9, पृष्ठ संख्या–42–4।
- प्रसाद पी. पी. (2001), 'अष्टावक्र गीता–मराठी' एस. एस. एन. एम. कोल्हापुर।
- Puri, Shri Swami Shatanand ;(2001) " The Quantum leap into the Absalute [Essence of Ashtavakra Gita] ; Pravathamma, C.P. S.S. Charitable Trust; Banglore.
- RamanM.(1945)"Ashtavakra Sanhita", Retrived 7 January 2015 from : http://benegal.org/ramana_maharshi/books/letters/letter181.html.
- रायजदा एस. (1988) के 'अक्षपाद गौतम का शिक्षा दर्शन और उसकी समकालीन सार्थकता' एम. बी बुच का फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, सोसाइटी फॉर एजुकेशनल रिसर्च एण्ड डवलपमेन्ट; बड़ौदा।
- Richards John, (2002) 'The Song of Ashtavakra Gita'; Retrived from: http://tripadaa.hpage.co.in/downloads-1345375.html
- Satya Sarda Kandula (2012); 'Ashtavakra Gita'; Retrived 12 February 2015 from:http://ancientIndians.wordpress.com
- शर्मा आर. ए., 'शिक्षा अनुसंधान' आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ, पृष्ठ संख्या–203–212।
- Shankar, Sri Sri Ravi (2010). *Ashtavakra Gita*. Bangalore: Sri Sri Publications Trust.ISBN 9789380592831.
- ShradhanandSwami(1936)Studynoteshttp://www.vedanta.Org/reading/monthly/articles/2005/10.bio.pdf
- सिंह जालिम (1971), 'अष्टावक्र गीता', तेज कुमार बुक डिपो, लखनऊ।
- Stroud, Scott R. (2004). "Narrative as Argument in Indian Philosophy: The Astavakra Gita as Multivalent Narrative." *Philosophy and Rhetoric* - Volume 37, Number 1, 2004, E-ISSN: 1527-2079 Print ISSN: 0031-8213, pp. 42-71
- स्वामी नित्यानन्दस्वरुप, (1940), 'अष्टावक्र गीता शब्दार्थ अनुवाद', संस्कृत डॉक्यूमेंट डॉट ओ आर जी।
- स्वामी रामानन्द, (2014) , " अष्टावक्र गीता " ,मनोज पॉकेट बुक्स , दिल्ली।
- wikipedia.org.(January3;2014) Retrived from:http://en.wikipedia.org/wiki/Ashtavakra/i87
- वेंकटेश्वरलू एम., (1978) 'महाभारत में निहित शैक्षिक दर्शन का अध्ययन', एम. बी बुच का थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, सोसाइटी फॉर एजुकेशनल रिसर्च एण्ड डवलपमेन्ट; बड़ौदा।